पवन कुमार जारेडा

कोटा, राजस्थान

आदमी आदमी कब रहा

मर क्यों नहीं जाती?

मेरे प्राण क्यों खाती?

तुम्हारे बराबर के सारे दरख़्त उखड़ गये,

तुम अभी और कितने दुख दोगी?

सुनकर सन्न रह गई बुढ़िया,

मन ही मन कलपती,

जैसे सिंह के जबड़े में फँसा देखकर अपने बच्चे को,

तड़पती है लाचार हरिणी।

मरना स्वयं के वश की बात तो नहीं।

कैसी बिडम्बना है,

वह सारा जीवन,

वे सारे सपने,

वे सारी विभिषिकाएँ जो जलाती थी दिन-रात,

वे दिन,

जब भूखा रहना पड़ता था कई दिन कई रैन,

“दोपहर के भोजन” की सिद्धेश्वरी के समान।

जीवन के सब सुखों को त्यागकर,

जीवन खपा दिया जिसकी सेवा में,

जिसकी उन्नति में,

जिसको हर जलजले से बचाया,

जैसे कंगारू माँ बचाती है अपने लाल को।

दिन-रात काम किया लाडले को छाती से चिपकाकर,

बाप की कमी नहीं खलने दी,

जो स्वर्ग सिधार गये थे

बच्चे के बचपन में।

माँ-बाप दोनों का फ़र्ज निभाया,

जिसने बचाया ढाल बनकर उम्रभर।

आज वही माँ,

बीमार असहाय-सी पड़ी खटोले पर।

कहा कलेजे के उस टुकड़े ने,

तू मर क्यों नहीं जाती?

तू मेरे प्राण क्यों खाती?